चतुर्विंशति तीर्थंकर स्तुति

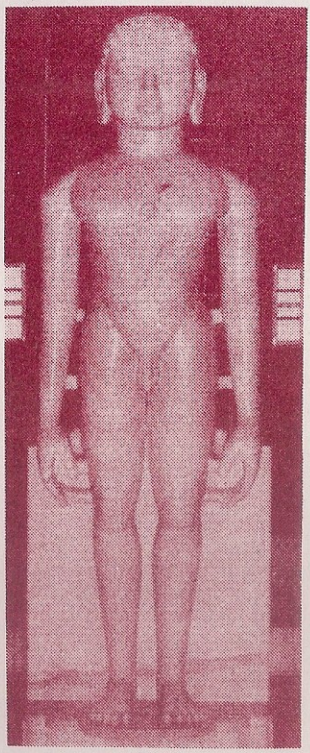

अयोध्या में स्थित भ० ऋषभदेव की
विशालकाय प्रतिमा

आर्यिका ज्ञानमती

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं० 191

चतुर्विंशति तीर्थंकर स्तुति

(शान्ति भक्ति एवं ऋषिमण्डल स्तोत्र हिन्दी)

भगवान ऋषभदेव अन्तर्राष्ट्रीय निर्वाण
महामहोत्सव के उपलक्ष्य में प्रकाशित

रचयित्री :

पूज्य गणिनी प्रमुख

श्री ज्ञानमती माताजी

प्रकाशक :

दि० जैन त्रिलोक शोध संस्थान

हस्तिनापुर (मेरठ) उ०प्र० 250 404

प्रथम संस्करण] वीर नि०सं० 2525 [मूल्य

1100 श्रावण शु० पूर्णिमा 26 अगस्त, 1999 10/-

प्रस्तावना

चतुर्विंशति तीर्थंकर स्तुति

कल्याण कल्पतरु स्तोत्र

—प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

परमपूज्य गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी की मौलिक कृति चौबीस तीर्थंकर स्तुति (कल्याण कल्पतरु स्तोत्र) में भगवान् आदिनाथ से लेकर महावीर स्वामी पर्यन्त चौबीसों तीर्थंकर की स्तुतियाँ हैं जो कि प्रत्येक भक्त को भक्ति की प्रेरणा प्रदान करती हैं।

आचार्य श्री समन्तभद्र स्वामी ने अपने स्वयंभू स्तोत्र में तीर्थंकर अरहनाथ की स्तुति करते हुए स्तुति शब्द का लक्षण बताया है—

गुणस्तोकं सदुल्लंघ्य तद्बहुत्वकथा स्तुतिः।
आनन्त्यात्ते गुणां वक्तुमशक्यास्त्वयि सा कथम्॥

अर्थात् जिसमें गुण तो थोड़े हों उन्हें बहुत बढ़ा-चढ़ाकर कहना तो स्तुति कहलाती है किन्तु हे भगवन् ! आप में गुण तो अनन्त हैं और मेरी शब्दावलि सीमित है अतः आपकी स्तुति करने में मैं कैसे समर्थ हो सकता हूँ ? पुनः आगे उन्होंने भगवान् की स्तुति में अपनी भक्ति को ही प्रबल बतलाया है यही बात आचार्यश्री मानतुंग स्वामी ने भक्तामर स्तोत्र में कही है।

इससे तात्पर्य यही निकलता है कि भगवान् के गुणों का वर्णन साक्षात् सरस्वती माता भी तीन लोक को कागज और लवणसमुद्र को स्याही बनाकर लिखने बैठ जावे तो भी जिनवर के अनन्त गुणों को कल्पान्तकाल तक लिख नहीं सकती क्योंकि संख्यात शब्दों के द्वारा अनंतगुणों का वर्णन हो ही नहीं सकता। फिर भी भक्त, लेखक या कवि अपनी भक्ति तो प्रदर्शित करता ही है जैसे सन्तान अपने माता-पिता के उपकार का बदला चुका नहीं सकता किन्तु कृतज्ञ बनकर उनकी वैयावृत्ति, आज्ञा पालन आदि करने वाला पुत्र ही सुपुत्र कहलाता है उसी प्रकार तीन लोक के पिता जिनेन्द्र भगवान् की यथा शक्ति भक्ति करने वाला मानव ही मुक्तिपथ का पथिक कहलाता है।

इसी शृंखला में पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी ने भी अपनी काव्य शैली में चौबीसों तीर्थंकर की स्तुतियाँ रची हैं। वैसे तो इन्होंने लगभग सैंकड़ों स्तुतियाँ संस्कृत एवं हिन्दी भाषा में रची हैं जिनमें छन्द, अलंकार, व्याकरण और साहित्य का अनोखा संगम देखने को मिलता है। संस्कृत छंदों में एकाक्षरी छंद से लेकर 32 अक्षरी छंद तक का प्रयोग आपने "कल्याणकल्पद्रुम" नामक स्तोत्र में चौबीस तीर्थंकर स्तुति की रचना की है वह भी पहले सम्यग्ज्ञान पत्रिका के चरणानुयोग में क्रम-क्रम से प्रकाशित हो चुकी है। संस्कृत और हिन्दी के सम्पूर्ण छन्दों पर आपको पूर्ण अधिकार प्राप्त है इसीलिए आपके द्वारा विभिन्न छन्दों में रचित इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम आदि विधान अत्यन्त लोकप्रियता को प्राप्त हुए हैं।

क्या विशेषता है चौबीसों स्तुतियों में?

शंभु छंद में रचित इन स्तुतियों में प्रत्येक तीर्थंकर के नाम, उनके चिन्ह, माता-पिता के नाम, जन्मनगरी और निर्वाण भूमि के नाम, पाँचों कल्याणक की तिथियाँ, शरीर की ऊँचाई, शरीर का वर्ण, आयु, वंश इत्यादि समस्त इतिहास भरा हुआ है। इन विशिष्टताओं के साथ-साथ आध्यात्मिक आनन्द और वैराग्यरस से ओत-प्रोत ये सभी स्तुतियाँ अपने आप में सर्वांगीण होने से मानो उत्तरपुराण का अध्ययन ही करा देती हैं। प्रत्येक स्तुति 5, 6, 7 या 8 छंदों में निबद्ध है। संगीत प्रेमी लोग तो इन्हें पच्चीसों प्रकार की धुनों में गा-गाकर भक्ति संगीत का आनन्द प्राप्त करते हैं।

इस पंचम काल में तो सभी के लिए भक्ति को प्रधान बताया गया है क्योंकि निर्विकल्प ध्यान और वीतराग विज्ञान की प्राप्ति तो आज मुनियों के लिए भी संभव नहीं है। भक्ति मार्ग में ही पूजा, स्तुति, सामायिक, देवशास्त्र गुरु की वन्दना आदि गर्भित हैं जो कि चंचल चित्त के विषय को अशुभ से शुभ में परिवर्तित कराने वाली क्रियायें हैं। पूज्य माताजी ने इस स्तोत्र की रचना सन् 1975 में की थी। जम्बूद्वीप संस्थान से प्रकाशित "आत्मा की खोज" नामक पुस्तक में इनका प्रकाशन हो चुका है।

पूज्य माताजी की संघस्थ आर्यिका स्वर्गीय श्री रत्नमती माताजी को ये

स्तुतियाँ बहुत प्रिय थीं वे प्रायः इनका पाठ करते-करते कहा करती थीं कि "वास्तव में इसमें कल्पवृक्ष सरीखी अचिन्त्य शक्ति है। प्रत्येक तीर्थंकर के पूरे इतिहास को अपने में समेटे ऐसी स्तुतियाँ मुझे कहीं दृष्टिगोचर नहीं हुई हैं।" जिस प्रकार से आचार्यश्री समंतभद्र ने स्वयंभू स्तोत्र की चौबीसों संस्कृत स्तुतियों में भगवान् के गुणानुवाद के साथ ही जगह-जगह न्यायदर्शन को समाहित किया है उसी प्रकार से इन स्तुतियों में भी इतिहास की प्रमुखता के साथ-साथ पंचपरिवर्तन का वर्णन, अध्यात्म का वर्णन तथा सिद्धान्त के साथ ही चारों अनुयोगों का समीकरण मिल जाता है। स्वयं रचयित्री आर्यिका श्री भी जब कभी अस्वस्थ होती हैं तो उनकी इच्छानुसार हम लोग इन्हीं स्तुतियों तथा इन्द्रध्वज आदि की आध्यात्मिक जयमालायें उन्हें सुनाते हैं जिससे उन्हें असीम शान्ति एवं स्वस्थता का अनुभव होता है। योगियों के लिये तो ज्ञानामृत का आस्वाद ही सर्वोत्कृष्ट औषधि है। जम्बूद्वीप स्थल पर कभी-कभी इन स्तुतियों का अखण्ड पाठ भी माताजी की प्रेरणा से होता रहता है।

इस पुस्तक को प्रकाशित करने का अभिप्राय यह है कि चैत्र मास में वदी नवमी को भगवान् आदिनाथ के जन्म और दीक्षा कल्याणक आते हैं तथा चैत्र सुदी तेरस को महावीर स्वामी की जन्म जयन्ती सभी जगह मनाई जाती है। इसलिए पूज्य गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी का कहना है कि चैत्र वदी नवमी से त्रयोदशी तक प्रत्येक शहर एवं गाँव में चौबीसों तीर्थंकर के ज़ीवन से सम्बन्धित उत्तरपुराण का स्वाध्याय सामूहिक रूप में अवश्य करना चाहिए तथा अन्य भी सांस्कृतिक कार्यक्रम, प्रतियोगिता, शिक्षण शिविर आदि आयोजन करें तो जैन धर्म की विशेष प्रभावना होगी। इसी के मध्य इस कल्पतरु स्तोत्र का अखण्ड पाठ भी मन्दिरों में आयोजित करें। यदि 20 दिन तक लगातार इस स्तुति का अखण्ड पाठ न कर सकें तो कम से कम बीच में 24 या 48 घण्टे का अखण्ड पाठ अवश्य करें। जिससे पुण्यबन्ध के साथ-साथ सभी तीर्थंकरों का जीवन परिचय भी ज्ञात होगा।

यदि 1-1 स्तुति कण्ठस्थ करने का प्रयास भी किया जाए तो अति उत्तम है। घर में छोटे-छोटे बालक-बालिकाओं को भी ये स्तुतियाँ रट लेनी चाहिए, ताकि वे मन्दिर में जाकर अलग-अलग तीर्थंकरों की प्रतिमा के समक्ष उन-उन स्तुतियों को पढ़ सकें एवं किसी के द्वारा किसी भी तीर्थंकर की कोई भी

कल्याणक तिथि आदि पूछे जाने पर बता सकें। स्तुति के माध्यम से उन बालक-बालिकाओं का ज्ञान प्रस्फुटित होगा तथा आगे उन तीर्थंकरों का विशेष जीवनवृत्त जानने की जिज्ञासा होगी। जैसे कि भगवान् महावीर बाल ब्रह्मचारी थे और आदिनाथ का विवाह हुआ था। चौबीसों तीर्थंकरों में से पाँच तीर्थंकर बाल ब्रह्मचारी हुए हैं, उनके नाम—वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर स्वामी। यद्यपि समस्त तीर्थंकर मोक्षगति को प्राप्त हो चुके हैं और मोक्ष अवस्था में सभी की आत्मा एक सदृश रहंती है तथापि इन पाँच बाल यतियों का अपना एक अलग ही स्थान है। जब आप शास्त्रों कां स्वाध्याय करेंगे तभी इन विषयों का ज्ञान होगा और फिर आप यदि कहीं किसी पुस्तक में लिखा पढ़ लेंगे कि भगवान् महावीर का विवाह हुआ था एवं वे एक कन्या के पिता थे तो सहज समझ जायेंगे कि यह दिगम्बर जैन परम्परा का ग्रन्थ नहीं है क्योंकि दिगम्बर जैन परम्परानुसार तीर्थंकर महावीर बाल ब्रह्मचारी थे, 30 वर्ष की युवावस्था में उन्होंने दीक्षा धारण की थी, 42 वर्ष की अवस्था में उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हुई थी एवं 30 वर्ष तक समवसरण में विहार करने के पश्चात् 72 वर्ष की आयु में उन्होंने निर्वाणपद को प्राप्त कर लिया था। महावीर का सच्चा और संक्षिप्त इतिहास यही है शेष पुराणों से ज्ञातव्य है। इस पुस्तक में पंचकल्याणक की जो तिथियाँ हैं पूज्य माताजी ने लिखी हैं वे उत्तर पुराण के आधार से लिखी हैं अतः प्रमाणिक हैं।

पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी दिगम्बर जैन समाज में उच्चकोटि की कवियित्री एवं लेखिका हैं लगभग 200 ग्रन्थों का सृजन इनकी शुद्ध लेखनी से हुआ है उन्हीं में से एक काव्यकृति का यहाँ प्रस्तुतीकरण हो रहा है।

चौबीस तीर्थंकर स्तुति को पढ़कर, अखण्ड पाठ का आयोजन कर आप सभी कल्पवृक्ष जैसे फल को प्राप्त करें यही मंगल कामना है।

❑

चौबीस तीर्थंकर स्तुति

(कल्याण कल्पतरु स्तोत्र)

रचयित्री—गणिनी प्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी

(1) श्री ऋषभदेव स्तुति

हे आदिनाथ ! हे आदीश्वर !, हे ऋषभ जिनेश्वर ! नाभिललन !
पुरुदेव ! युगादि पुरुष ! ब्रह्मा, विधि और विधाता मुक्तिकरण ॥
मैं अगणित बार नमूँ तुझको, बन्दूँ ध्याऊँ गुणगान करूँ।
स्वात्मैक परम आनन्दमयी, सुज्ञान सुधा का पान करूँ ॥1॥

आषाढ़ बदी दुतिया तिथि थी, मरुदेवी गर्भ पधारे थे।
श्री ह्री धृति आदि देवियों ने, माता के चरण पखारे थे ॥
शुभ चैतबदी नवमी तिथि थी, भगवान यहाँ जब थे जन्में।
तब मेरु सुदर्शन के ऊपर, अभिषेक किया था इन्द्रों ने ॥2॥

वो घड़ी धन्य थी धन्य दिवस, धन धन्य अयोध्या नगरी थी।
श्री नाभिराज भी धन्य तथा, तब धन्य प्रजा भी सगरी थी ॥
प्रभु ने असि मसि आदिक किरिया, उपदेशी आदि विधाता थे।
थे युग के आदिपुरुष ब्रह्मा, श्रावक मुनि मार्ग विधाता थे ॥3॥

थे कनक वर्ण धनु[1] पंच शतक, तनु वे युग के अवतारी थे।
आयु चौरासी लाख पूर्व, धारक वृष लक्षण[2] धारी थे ॥
सब परिग्रह ग्रन्थी को तजकर, निर्ग्रंथ दिगम्बर रूप धरा।
वह चैत्र बदी नवमी शुभ थी, जिस दिन प्रभु ने कचलोंच करा ॥4॥

---

1. एक धनुष में चार हाथ, ऐसे दो हजार हाथ ऊँचा शरीर था। 2. बैल चिन्ह।

षट् मास योग में लीन रहे, लंबित भुज नासादृष्टी थी।
निज आत्म सुधारस पीते थे, तन से बिल्कुल निर्ममता थी ॥
फिर ध्यान समाप्त किया प्रभु ने, आहार विधी बतलाने को।
भवसिंधू में डूबे जन को, मुनिमार्ग सरल समझाने को ॥5॥

षट् मास भ्रमण करते-करते, प्रभु हस्तिनागपुर में आये।
सोमप्रभ नृप श्रेयांस तभी, आहार दान दे हर्षाये ॥
रत्नों की वर्षा हुई गगन से, सुरगण मिल जयकार किया।
धन-धन्य हुई वैसाख सुदी, अक्षय तृतिया आहार हुआ ॥6॥

जब आप क्षपक श्रेणी चढ़कर, घाती पर ध्यान चक्र छोड़ा।
एकादशि फाल्गुन कृष्णा थी, केवलश्री से नाता जोड़ा ॥
त्रिभुवन में ज्ञान लता फैली, भविजन को छाया सुखद मिली।
फिर माघ कृष्ण चौदश के दिन, मुक्तिश्री प्रभु के गले मिली ॥7॥

क्रोधादिक रिपु को जीत प्रभो, स्वात्मा से जनित सुखामृत को।
पीकर अत्यर्थतया निशदिन, भव से सु निकाला आत्मा को ॥
त्रिभुवन के मस्तक पर जाकर, अब तक व अनंते कालों तक।
ठहरेंगे वे पुरुदेव ! मुझे, शुभ "ज्ञानमती" श्री देवें झट ॥8॥

(2) श्री अजितजिन स्तुति

इन्द्रिय विषयों को जीत अजित, प्रभु ख्यात हुए कर्मारिजयी।
त्रिभुवन पूज्या सुरगण मान्या, वह पुरी अयोध्या विजित मही ॥
माता विजया भी धन्य हुईं, जितशत्रु पिता भी धन्य हुए।
इक्ष्वाकु वंश के भास्कर को, कर उदित उभय जग वंद्य हुए ॥1॥

वह ज्येष्ठ अमावस्या शुभ थी, प्रभु गर्भ महोत्सव इन्द्र किया।
सुर ललनाओं ने माता की, सेवा कर अतिशय पुण्य लिया ॥
वर माघ सुदी दशमी तिथि थी, सुरशैल शिखर पर इंद्रों ने।
अभिषेक महोत्सव करके फिर, शृंगार किया प्रभु का शचि ने ॥2॥

अठरह सौ हाथ तनू स्वर्णिम, बाहत्तर लक्ष पूर्व आयु।
देवों के लाए भोजन औ, भूषण वसनादि भोग्य वस्तु ॥
प्रभु ने न यहाँ के वस्त्र धरे, नहिं भोजन कभी किया घर का।
नित सुर बालक खेलें संग में, औ इन्द्र सदा ही किंकर था ॥3॥

शुभ माघ सुदी नवमी सुरगण, लौकांतिक सुरगण भी आए।
प्रभु द्वारा तजे वसन भूषण, औ केश पयोदधि पधराये ॥
प्रभु घोर तपश्चर्या करते, शुद्धात्म ध्यान में लीन हुए।
तब ध्यान अग्नि के द्वारा ही, झट कर्मवनी को दग्ध किये ॥4॥

वह पौष सुदी एकादशि थी, प्रभु ज्ञानानंद स्वभावी थे।
विजितेन्द्रिय केवलज्ञान लिए, घट-घट के अन्तर्यामी थे ॥
धर्मामृत वृष्टि से भविजन, तरु को सींचा पुष्पित कीना।
वे स्वर्ग मोक्ष से फलित हुए, अगणित को अपने सम कीना ॥5॥

थी चैत्र सुदी पंचमि प्रभु ने, पंचमगति का साम्राज्य लिया।
वे पंचकल्याणक के नायक, भव पंचभ्रमण का नाश किया ॥
'गज' चिन्ह से जाने जाते वे, मुझको भी पंचमगति देवें।
सब रोग शोक से प्रगट हुए, भव दुःखों को झट हर लेवे ॥6॥

हे अजित नाथ ! बाधा विरहित, शिव सौख्य प्रदान करो मुझको।
प्रभु ! पूर्णज्ञान साम्राज्य श्री, मेरी तुरन्त देवो मुझको ॥
हे नाथ नमोस्तु है तुमको, हे अजित ! अजय पद को दीजे।
भगवन् ! मुझको श्री "ज्ञानमती", सुखसिद्धि समृद्धि भी कीजे ॥7॥

(3) श्री संभवजिन स्तुति

हे मोहध्वांत हर ज्योतिरूप, भास्कर भवहर संभव स्वामी।
तव चरण सरोरुह को प्रणमूँ, धर्मेश्वर तीर्थेश्वर नामी ॥
त्रैलोक्य अलोकाकाश सहित, सब तुमने अवलोकित कीना।
हे आप्त जिनेश्वर सब जग को, त्रैकालिक भी युगपत् जाना ॥1॥

भगवन् ! तव चरण कमल युग हैं, शुभदायक शरणभूत नामी।
हे संभव ! भुवि पर भविजन को, शम् कीजे तुम्हें नमूँ स्वामी ॥
श्रावस्ती में दृढ़राज पिता, औ मात सुषेणा धन्य हुए।
फाल्गुन शुक्ला अष्टमि तिथि थी, प्रभु मात गर्भ अवतीर्ण हुए ॥2॥

कार्तिक पूर्णा में जन्म लिया, यश ज्योत्स्ना त्रिभुवन व्यापी।
हे नाथ ! आपके वचनों की, सौरभता भी त्रिभुवन व्यापी ॥
सोलह सौ हाथ तनू ऊँचा, आयू थी साठ लाख पूरब।
जन्में तब से दश अतिशय युत, प्रभु को नमते सुर मस्तकनत ॥3॥

जिन रूप धरा मगशिर[1] पूर्णा, में कीर्ति चाँदनी फैल रही।
कार्तिक वदि चौथ तिथी के दिन, कैवल्यश्री से भेंट हुई ॥
जब चैत्र सुदी षष्ठी आई, शिव कन्या ने वरमाल लिया।
कनकाभतनू भी अतनु हुए, फिर भी ग्रीवा में डाल दिया ॥4॥

सम्मेदगिरी पर शिव लक्ष्मी, ने वरण किया शिव धाम मिला।
जग अश्वचिन्ह से है जाने, सब भव्यों का मन कमल खिला ॥
भुवि शांति हेतु भव हानि हेतु, सुख वृद्धि हेतु संभव जिन हो।
मुझ "ज्ञानमती" के सर्वसिद्धि के, हेतु सदा संभव जिन ! हो ॥5॥

(4) श्री अभिनंदनजिन स्तुति

जिन आत्म सुखामृत सारभूत !, भय शोक मान से रहित सदा।
हे वीतराग परमात्मप्रभो !, तुमको नमोऽस्तु हो मुदा सदा ॥
सकलज्ञ सूर्य ! सुखरत्नाकर, हे सर्वलोकमणि तीर्थंकर।
हे जगत्पिता भाक्तिक जन के, गुरु भव से त्राण करो जिनवर ॥1॥

त्रिभुवन चूड़ामणि सुखदाता, चिन्तामणि कल्पतरु तुम हो।
मेरे मन में आनंद भरो, हे अभिनन्दन ! भव कंद हरो।

---

1. कल्याणमाला से।

वह पुरी विनीता पूज्य हुई, इक्ष्वाकुवंश के चन्द्र हुए।
जननी सिद्धार्था मान्य हुई, औ पिता 'स्वयंवर' धन्य हुए ॥2॥

वैशाख सुदी षष्ठी के दिन, प्रभु का गर्भोत्सव इन्द्र किया।
वर माघ सुदी द्वादश तिथि को, मंदरगिरि पर अभिषेक हुआ ॥
आयु है लक्षपचासपूर्व, चौदहसौ कर तनुतुंग कहा।
कनकच्छवि, मर्कटलांछनयुत, मनमर्कट को झट वश्य किया ॥3॥

फिर माघसुदी बारस आयी, धन त्याग तपोधन कहलाये।
चौदस थी पौष सुदी जब ही, कैवल्यरमापति सुर गाये ॥
वैशाख सुदी षष्ठी के दिन, शिवकांता के भर्तार हुए।
सहजात्म समुद्भव आल्हादक, परमामृत सुख आनंद लिए ॥4॥

सुखवर्द्धन हे अभिनन्दन ! तव, वचनामृत भुवि आनंद करो।
भव सागर में डूबे जन को, तुम पोत सदृश अवलंबन हो ॥
मम अन्तःकरण पवित्र करो, सब जन मन को भी शुद्ध करो।
मम "ज्ञानमती" लक्ष्मी मुझको, देकर झट हे जिन ! तृप्त करो ॥5॥

(5) श्री सुमतिजिन स्तुति

जिनके वक्त्राम्बुज से निकली, दिव्यध्वनि अमृतरस झरिणी।
जो चित्तकुमति हरणी मन में, चैतन्य सुधारस की भरणी ॥
उन सुमतिनाथ को बंदूँ मैं, वे ज्ञान ज्योति आनन्दघन हैं।
निज शुद्धात्मा को ध्या ध्याकर, कर्मारिनाश शिवधाम रहे ॥1॥

यह आत्मा सिद्ध सदृश मेरी, चिच्चैतन्यामृत पूर्ण भरी।
यह ज्ञानानंद स्वभावमयी, प्रभु ने मुझमें ये सुमति भरी ॥
हे भव्य कमलिनी सूर्य प्रभो !, योगीन्द्र चित्त गोचर सुमते।
मुझ मन में सदा निवास करो, अगणित गुणसागर सिद्धिपते ॥2॥

साकेतपुरी इक्ष्वाकुवंश, में पिता मेघरथ मान्य हुए।
मंगल जननी मंगलावति की, श्रीआदि देवियाँ सेव करें ॥
श्रावण सुदि दुतिया में गर्भे, अवतार हुए मंगलकारी।
शुभ चैत्रसुदी एकादशि को, जन्मोत्सव इन्द्र किया भारी ॥3॥

वैशाखसुदी नवमी तिथि में, दीक्षा लक्ष्मी ने वरण किया।
सित चैत्र इकादशि में तुमने, कैवल्य बोध साम्राज्य लिया ॥
इस तिथि में सम्मेदाचल से, प्रभुवर लोकांत विराजे जा।
त्रिभुवन के स्वामी सिद्ध हुए, अपने ही अन्दर राजे जा ॥4॥

बारह सौ कर उत्तुंग प्रभो, चालीस लक्ष पूर्वायु हो।
तनु कनकद्युति सौन्दर्यखान, फिर भी तनु विरहित सुन्दर हो ॥
प्रभु अनुपम अतुल अलौकिक हो, चकवा लाच्छन से जाने सब।
अज्ञानमती हर "ज्ञानमती", कीजे मम शिवपद पाने तक ॥5॥

(6) श्री पद्मप्रभ स्तुति

तव विश्ववंद्य चरणारविंद, संकल्पमात्र शुभ फलदायक।
गणधर मुनिगण नुत देव ! सदा, मनवचतन से प्रणमूँ सुखप्रद ॥
तव पादयुगल की भक्ति से, मानव संसार जलधि तिरते।
पद्मा से आलिंगित मूर्ति, पद्मप्रभ ! मुझको सम कीजे ॥1॥

कौशाम्बी के नृप 'धरण' पिता, औ प्रसू सुसीमा ख्यात जगत्।
इक्ष्वाकुवंश के ओ भास्कर !, पद्मा के आलय तव पदयुग ॥
इक सहस हाथ ऊँचा तनु था, औ तीस लक्ष पूर्वायु थी।
प्रभु लाल कमल समदेह कांति, औ लाल कमल था चिन्ह सही ॥2॥

प्रभु माघवदी षष्ठी तिथि में, गर्भागम मंगल प्राप्त किया।
कार्तिक कृष्णा[1] तेरस के दिन, त्रैलोक्य विभाकर उदित हुआ ॥

---

1. उत्तरपुराण में वदि तेरस है।

उस ही तिथि में तप लक्ष्मी से, आलिंगित पृथ्वी पर विहरे।
सित चैत पूर्णिमा के दिन ही, निज ज्ञान पूर्ण करके निखरे ॥3॥

फाल्गुन वदि चौथ दिवस मुक्ति, लक्ष्मी के साथ निवास किया।
कृतकृत्य निरंजन सिद्ध हुए, निज आत्मजनित पीयूष पिया ॥
मेरे मन के सब ही दुःख को, निश्चित तुमने जाना भगवन्।
अब शीघ्र हरो दुःख "ज्ञानमती", श्री मम मुझको देना भगवन् ॥4॥

(7) श्री सुपार्श्वजिन स्तुति

प्रभु पास नहीं किंचित् संग है, अतएव राग का लेश नहीं।
आयुध के पास न होने से, प्रभु तुम में किंचित् द्वेष नहीं ॥
तव वाणी दिव्या सत्य सुखद, अतएव दोष लवलेश नहीं।
तुमको प्रणमूँ सर्वज्ञ प्रभो !, जिन हे सुपार्श्व ! जगवंद्य सही ॥1॥

हरिताभ तनु फिर भी तनु से, विरहित अशरीरी सिद्ध तुम्हीं।
शिवरमणी में आसक्त सदा, फिर भी ब्रह्मचारी पूर्ण तुम्हीं ॥
कर्मारि युद्ध में निर्दय हो, फिर भी करुणा के सागर हो।
सब छोड़ दिया फिर भी अपने, अगणित गुणनिधि रत्नाकर हो ॥2॥

धनपति ने नगरि बनारस में, रत्नों की वर्षा वर्षाई।
पृथ्वी भी तृप्त हुई उस क्षण, पृथ्वीषेणा माँ हर्षायी ॥
सित भादों षष्ठी को प्रभु ने, माता के गर्भ प्रवेश किया।
शुक्तापुट में मुक्ताफलवत्, नहिं माँ को किंचित् क्लेश हुआ ॥3॥

शुभ ज्येष्ठ सुदी वारस प्रभु का, अभिषेक हुआ मंदिर गिरि पर।
उस तिथि ही में जिनरूपधरा, धर ध्यान शस्त्र भी करुणाकर ॥
फाल्गुन वदि षष्ठी को प्रभु के, घट में केवल रवि उदित हुआ।
फाल्गुन वदि सप्तमि मोक्ष बसे, सब कर्म नशे तम भाग गया ॥4॥

अठ सौ कर तुंग शरीर प्रभो, मरकतमणि आभा धारी हो।
आयू है बीस लाख पूरब, इक्ष्वाकु वंश अवतारी हो ॥
स्वस्तिक लांछन सुप्रतिष्ठ पिता, रत्नत्रय निधि के पूर्ण धनी।
प्रभु तव प्रसाद से पूर्ण "ज्ञानमती", हो मुझको अर्हत् लक्ष्मी ॥5॥

(8) श्री चंद्रप्रभजिन स्तुति

भव वन में घूम रहा अब तक, किंचित भी सुख नहिं पाया हूँ।
प्रभु तुम सब दुःख के ज्ञाता हो, अतएव शरण में आया हूँ ॥
सुरपति गणपति नरपति नमते, तव गुणमणि की बहुभक्ति लिए।
मैं भी नत हूँ तव चरणों में, अब मेरी भी रक्षा करिये ॥1॥

काशी में चंद्रपुरी सुन्दर, रत्नों की वृष्टि खूब हुई।
भू धन्य हुई जन धन्य हुए, पितु-मात के हर्ष की वृद्धि हुई ॥
राका शशांक सम कांत तनु, धवलोज्ज्वल कांति यशोधारी।
चिंतित फलदाता चिंतामणि, औ कल्पतरू भी सुखकारी ॥2॥

तिथि चैत्रवदी पंचमी कही, औ पौष वदी ग्यारस सुखदा।
फिर पौष वदी ग्यारस उत्तम, औ फाल्गुन वदि सप्तमी शुभा ॥
फाल्गुन सुदि सप्तमि ये तिथियाँ, क्रम से पाँचों कल्याणक की।
चन्द्रप्रभ ! पंचकल्याणकपति !, मुझको दें पंचम सिद्धगती ॥3॥

जिस वन में ध्यान धरा प्रभु ने, उस वन की शोभा क्या कहिए।
जहाँ शीतल मंद पवन बहती, षट् ऋतु के कमल खिले लहिए ॥
सब जात विरोधी गरुड़ सर्प, मृग सिंह खुशी से झूम रहे।
सुर खेचर नरपति आ आकर, मुकुटों से जिन पद चूम रहे ॥4॥

महासेन पिता भी पूज्य हुए, जननी लक्ष्मणा पवित्र हुयी।
दशलाख वर्ष पुर्वायू थी, छह सौ करतुंग शरीर सही ॥
शशि लांछनयुत भ्रम तम हरते, यश ज्योत्सना फैली इस जग में।
मुझको भी निज संपद देवो, मैं नमूँ सदा तव चरणों में ॥5॥

(9) श्री पुष्पदंतजिन स्तुति

त्रैलोक्यपति देवेन्द्र नमित, साधूगण वंद्य सदा जिनवर।
सुख आत्माधीन अचल तव है, स्थान भ्रमण विरहित सुस्थिर ॥
तव कीर्तिलता त्रिभुवन व्यापी, औ सिद्धि रमा तव चरणरता।
तव दिव्यसुधावच भव जलधि, से तिरने को उत्तम नौका ॥1॥

काकंदी में सुग्रीव पिता, माता जयरामा जग पूजित।
फाल्गुनवदि नवमी के दिन प्रभु, गर्भावतरण मंगल मंडित ॥
मगसिर शुक्ला प्रतिपद तिथि थी, जब जन्में थे भगवान् यहाँ।
उन पुष्पदन्त की दिव्यकथा, हरती है भवमय त्रास महा ॥2॥

मगसिर सुदि एकम के प्रभु ने, जिनमुद्रा धर मोहारि हना।
कार्तिक सुदि दूज दिवस केवल-लक्ष्मी ने आन लिया शरणा ॥
भादों सुदि अष्टमि के दिन प्रभु, सम्मेदाचल से सिद्ध हुए।
सुखस्वात्मसुधारस पान तृप्त, त्रिभुवन के अग्र विराज गये ॥3॥

चउशतकर तुंग मकर लांछन, दो लाख वर्ष पूर्वायु कही।
शशिकांत देह भी पुष्पदंत ! अंतक के अन्तक तुम्हीं सही ॥
निश्चय व्यवहार रत्नत्रय से, भूषित शिवकांता वरण किया।
मेरे भी उभय रत्नत्रय को, बस पूर्ण करो मैं शरण लिया ॥4॥

(10) श्री शीतलजिन स्तुति

यदि किसी तरह से हे शीतल ! शशि किरण सदृश तव वचन मिले।
भव आतप से झुलसे प्राणी, के तत्क्षण ही मन कुमुद खिले ॥
फव्वारागृह अमृतवाणी, मलयाचल चंदन भी फ़िर क्या?
त्रिभुवन दुःख दाव शांत करते, शीतल तव वचन अहो फिर क्या? ॥1॥

वह भद्रपुरी प्रभु जन्म लिया, जग भद्रकरी सुर पूज्य हुई।
दृढ़रथ नरनाथ सुनंदा भी, सुरवंद्य प्रजा भी धन्य हुई ॥

वदि चैत्र अष्टमी गर्भ बसे, वदि बारस माघ सुजन्मे थे।
शुभ माघ वदी बारस के प्रभु, दीक्षा ले वन-वन घूमे थे ॥2॥

वदि पौष चतुर्दशि केवल रवि, किरणों से जगत प्रकाश किया।
आश्विन सित अष्टमि के प्रभु ने, वर मुक्तिनगर का राज्य लिया ॥
सम्मेदशिखर है पूज्य धाम, शीतल प्रभु शीतल कृत जग में।
सबसे शीतल है स्वात्मधाम, उसमें ही आज विराज रहे ॥3॥

इक्ष्वाकु वंश कनकाभतनु, श्रीवृक्ष चिन्ह से जाने सब।
तनु तुंग तीन सौ आठ हाथ, आयु इक लक्ष वर्ष पूरब ॥
शीतल प्रभु तुमको नमूँ सदा, मेरे मन को शीतल करिए।
भव-भव में भक्ति रहे तुझमें, बस मुझ पर कृपा दृष्टि धरिये ॥4॥

(11) श्री श्रेयाँसजिन स्तुति

श्रेयस्कर चिच्चैतन्यात्मा से, प्रकटित अमृत को पीकर।
जो प्रभु श्रेयाँस हुए जग में, वे मुझको भी हों श्रेयस्कर ॥
श्रेयो अर्थी जो भविजन हैं, तव चरण सरोरुह में नमते।
मैं भी श्रद्धा से नमूँ सदा, नमते ही विघ्न कर्म भगते ॥1॥

है सिंहपुरी सुरनर पूजित, नृप विष्णुमित्र भगवंत पिता।
नंदा जननी आनन्दकरणी, सब नारी को मंगल दाता ॥
छठ ज्येष्ठ वदी में गर्भ बसे, फाल्गुन वदि ग्यारस में जन्मे।
फाल्गुन वदि ग्यारस में प्रभु को, था वरण किया तप लक्ष्मी ने ॥2॥

शुभ माघ अमावस में ज्ञानी, श्रावण पूर्णा को यम जीता।
तब सिद्धी कन्या ने आकर, प्रभु को लोकांत तरफ खींचा ॥
पहले प्रभु ने प्रज्ञा असि से, नृप मोह का मस्तक काट लिया।
फिर ध्यान चक्र से मृत्यु को, मारा त्रिभुवन का राज्य लिया ॥3॥

तनु तुंग तीन सौ बीस हाथ, आयु चौरासी लाख वर्ष।
तपनीय स्वर्णसम देह नाथ !, गेंडा लांछन से आप सहित ॥
निज पर का भेद ज्ञान मेरा, दृढ़ हो ऐसी शक्ति दीजे।
मैं स्वात्मसुधारस आनंद में, रम जाऊँ ऐसी मति दीजे ॥4॥

(12) श्री वासुपूज्यजिन स्तुति

आत्मा औ तनु के अन्तर को, कर तनु से निर्मम हो जाऊँ।
मैं शुद्ध बुद्ध परमात्मा हूँ, यह समझ स्वयं में रम जाऊँ ॥
इन्द्रिय बल आयु श्वास चार, प्राणों को धर-धर मरता हूँ।
निश्चय नय से नहिं जन्म-मरण, फिर भी निश्चय नहिं करता हूँ ॥1॥

मैं इन प्राणों से भिन्न सदा, पुद्गल से भिन्न निराला हूँ।
सुख सत्ता दर्शन ज्ञान वीर्य, चेतनमय प्राणों वाला हूँ ॥
हे वासुपूज्य ! तव चरण कमल, की भक्ति से यह मिल जावे।
जो खोई शक्ति अनन्त मेरी, तव नाम मंत्र से प्रगटावे ॥2॥

चंपापुर में वसुपूज्य पिता, और प्रसू जयावति इन्द्र नमित।
आषाढ़ वदी छठ को प्रभु ने, माँ गर्भ प्रवेश किया सुरनत ॥
फाल्गुन वदि चौदस जन्म लिया, इस तिथि को ही जिनवेश धरा।
सित माघ द्वितीया के प्रभु को, केवल लक्ष्मी ने स्वयं वरा ॥3॥

भादों सुदि चौदस को प्रभुवर, चम्पापुर से शिव धाम गये।
बाहत्तर लक्ष वर्ष आयु, दो सौ अस्सी कर तुंग कहे ॥
कल्हार कमल छवि महिष चिन्ह, फिर भी तनुमुक्त अनन्तगुणी।
वासवगण पूजित वासुपूज्य ! मम दीजे निज सम्पत्ति घनी ॥4॥

(13) श्री विमलजिन स्तुति

कांपिल्यपुरी पितु कृतवर्मा, माता जयश्यामा विख्याता।
शुभ ज्येष्ठ वदी दशमी प्रभु का, माता के गर्भ निवासा था ॥

निर्मल त्रय ज्ञान सहित स्वामी, मल रहित गर्भ में तिष्ठे थे।
सित माघ चतुर्थी[1] के दिन में, इन्द्रों से पूजित जन्मे थे ॥1॥

सितमाघ चतुर्थी दीक्षा ली, सित माघ छट्ठ को ज्ञान हुआ।
आषाढ़ वदी अष्टमि तिथि में, पंचम गति को प्रस्थान हुआ ॥
दो सौ चालीस कर तुंग तनु, प्रभु साठ लाख वर्षायु थी।
कनकच्छवि घृष्टी[2] लांछन तव, हे विमल ! करो मम विमलमती ॥2॥

मैं भाव कर्म औ द्रव्यकर्म, नोकर्म मलों से भिन्न कहा।
मैं अमल अरूपी अविकारी, निश्चय नय से चित्पिंड कहा ॥
चिच्चमत्कारमय ज्योतिपुँज, सहजानंदैक स्वभावी हूँ।
मैं केवलज्ञान अखंड पिंडमय, सुख चिद्रूप स्वभावी हूँ ॥3॥

भगवन् ! ऐसी शक्ती दीजे, मैं मुझमें स्थिर हो जाऊँ।
अणुमात्र नहीं किंचित् मेरा, मैं पर से ममता बिसराऊँ ॥
मैं तुमको प्रणमूँ बार-बार, बस मम पूरी इक इच्छा हो।
एकाकी "ज्ञानमती" प्रगटे, जहाँ पर की पूर्ण उपेक्षा हो ॥4॥

(14) श्री अनंतजिन स्तुति

हे नाथ ! अनंत गुणाकर तुम, साकेत पुरी में जन्म लिया।
जयश्यामा माँ सिंहसेन पिता, ने कीर्ति ध्वजा को लहराया ॥
कार्तिक वदि एकम गर्भ बसे, वदि ज्येष्ठ दुवादशि जन्मे थे।
इस ही तिथि में दीक्षा लेकर, तप तपते वन वन घूमे थे ॥1॥

चैत्री मावस में ज्ञानोत्सव, इस ही तिथि में प्रभु सिद्ध हुए।
दो सौ कर देह कनक कांति, प्रभु तीस लाख वत्सर[3] थिति[4] है ॥
सेही लांछनयुत अंतकहर ! हे देव अनंत ! तुम्हें प्रणमूँ।
यह सब व्यवहार स्तुति भगवन् ! निश्चय से गुण-गण को हि नमूँ ॥2॥

---

1. किसी प्रति में चौदश तिथि है। 2. सूकर। 3. वर्ष। 4. आयु।

यद्यपि ये कर्म अनादि से, मेरे संग बँधते आये हैं।
फिर भी अणुमात्र नहीं मुझमें, परिवर्तन करने पाये हैं ॥
मैं सब प्रदेश में ज्ञानमयी, जड़कर्मों से क्या नाता है?
मैं हूँ चैतन्य अनंत गुणी, जड़ ही जड़ के निर्माता हैं ॥3॥

यह निश्चय नय जब निश्चय से, ध्यानस्थ अवस्था पाता है।
तब कर्मों का कर्त्ता भोक्ता, नहिं होता बंध नशाता है ॥
भगवन् ! तव चरण कमल सेवा, करते-करते यह फल पाऊँ।
अनुपम अनंत गुण के सागर, निज आत्मा में ही रम जाऊँ ॥4॥

(15) श्री धर्मजिन स्तुति

हे धर्मधुरन्धर धर्मनाथ ! धर्मामृतदायी मेघ तुम्हीं।
रत्नों की वर्षा होने से, वह रत्नपुरी थी रत्नमयी ॥
यह सुतवन्ती सुप्रभावती, पितु भानुराज महिमाशाली।
वैसाख सुदी तेरस के दिन, गर्भागम उत्सव था भारी ॥1॥

तिथि माघ सुदी तेरस शुभ थी, इन्द्रों ने जन्म न्हवन कीना।
उस ही तिथि में प्रभु दीक्षा ली, निज पर को पृथक-पृथक कीना ॥
पौषी पूर्णा को ज्ञान पूर्ण, हो गया उजाला त्रिभुवन में।
शुभ ज्येष्ठ सुदी चौथी के प्रभु, शिवपद को प्राप्त किया क्षण में ॥2॥

इक सौ अस्सी कर देह प्रभु ! दस लाख वर्ष थिति कनक कांति।
है वज्र चिन्ह प्रभु कर्म शैल, को चूर किया तुम वज्र भांति ॥
हे धर्मतीर्थ के तीर्थंकर ! तुमने यम को चकचूर किया।
मैंने भी शरणा ले तेरी, अगणित दुःखों को दूर किया ॥3॥

मैं मिथ्या अविरति क्रोध-मान, माया लोभों से भिन्न सही।
ये सब औपाधिक भाव कहे, मेरा स्वभाव है ज्ञानमयी ॥
मैं तुमको वंदन कर करके, बस तुम जैसा ही बन जाऊँ।
प्रभु ऐसा ही वर दो मुझको, मैं स्वयं स्वयंभू बन जाऊँ ॥4॥

(16) श्री शांतिजिन स्तुति

श्री शान्ति प्रभो ! शरणागत जन, शान्ती के दाता कहें तुम्हें।
यह धन्य हुई हस्तिनापुरी, जहाँ राज्य किया शांतीश्वर ने ॥
विश्वसेन पिता ऐरादेवी, माता का अतिशय पुण्य खिला।
भादों वदि सप्तमि के प्रभु को, गर्भागम का सौभाग्य मिला ॥1॥

शुभ ज्येष्ठ वदी चौदस आई, शांतीश्वर ने जब जन्म लिया।
सुरगृह में बाजे बाज उठे, इन्द्रों ने मस्तक नमित किया ॥
त्रिभुवन में शांति लहर दौड़ी, नरकों में कुछ क्षण शांति हुई।
गिरि मंदर में अभिषेक हुआ, उत्सव में भू नभ एक हुई ॥2॥

शांतीश प्रभू चक्रीश बने, षट्खंड मही का भोग किया।
शुभ ज्येष्ठ वदी चौदस के दिन, बस चक्ररत्न को त्याग दिया ॥
इक शतक साठ कर तनु सुन्दर, आयू इक लाख वर्ष प्रभु की।
तपनीय कनक सम कांति विभो ! मृग लांछन से जाने सब ही ॥3॥

प्रभु ध्यान चक्र को ले करके, मोहारि नृपति को मारा था।
वर पौष सुदी दशमी के दिन, भव्यों को मिला सहारा था ॥
षोडश तीर्थंकर कामदेव, पंचम चक्री त्रय पदधारी।
वर ज्येष्ठ वदी चौदस के दिन, त्रिभुवन साम्राज्य मिला भारी ॥4॥

प्रभु नर्क निगोद अरू विकलत्रय, दुःखों को सहता आया हूँ।
तिर्यंच मनुज सुर गतियों के, दुःखों से खूब सताया हूँ ॥
नौ महिने तक मैं माता के, उर में औंधे मुँह लटका था।
अति घृणित अशुचि में पड़ा-पड़ा, नहिं किंचित् हिल-डुल सकता था॥5॥

वहाँ स्वांस घुटा करता प्रतिक्षण, नहिं पलभर आँखें खोल सका।
अति घोर कष्ट सहता रहता, नहिं किंचित् भी कुछ बोल सका ॥
जैसे-तैसे कर जन्म लिया, उस काल प्रभो ! जो कष्ट हुआ।
संख्यातों जिह्वा कह न सकें, फिर कैसे भी मैं कहूँ हहा ॥6॥

बचपन में भी मैं मूक रहा, जो-जो दुःख भोगे हैं प्रभुवर।
मैं भूल गया बस फूल गया, कुछ क्षण तरुणाई को पाकर ॥
अब इष्ट वियोग अनिष्ट योग, के दुःख से भी घबराया हूँ।
तुम शांती के दाता हो भगवन्, अतएव शरण में आया हूँ ॥7॥

सम्यग्दर्शन औ ज्ञान चरण, ये रत्नत्रय निधि मुझे मिली।
तनु से ममता भव बीज अहा ! सम्यग्दृक् कलिका आज खिली ॥
हे शान्तिनाथ ! मैं नमूँ सदा, बस भक्ती का फल एक मिले।
नहीं बार-बार मैं जन्म धरूँ, बस मुझको सिद्धी शीघ्र मिले ॥8॥

(17) श्री कुंथुजिन स्तुति

जितने भी पुद्गल इस जग में, सबको भोगा छोड़ा मैंने।
अब सब उच्छिष्ट सदृश मुझको, हा फिर भी ममता है इनमें ॥
नभ के प्रत्येक प्रदेशों को, मैं जन्म मरण से पूर्ण किया।
त्रिभुवन में जी भर घूम चुका, नहिं कुछ भी क्षेत्र अपूर्ण रहा ॥1॥

जो हुए अनंतानंतों ही, उत्सर्पिणी अवसर्पिणी समय।
उन सबमें जन्म मरण करता, आया नहिं छोड़ा एक समय ॥
चारों गतियों की सब आयू, भोगी है बार अनंतों मैं।
ग्रैवेयक ऊपर नहीं गया, बस इतना बचा दिया मैंने ॥2॥

सब मिथ्या अविरति भावों में, क्रोधादि कषाय विभावों में।
इन दुर्भावों में रहा किंतु, नहिं लिया अपूर्व भाव मैंने ॥
इस तरह पंच परिवर्तन से, परिवर्तन करता आया हूँ।
मैं काल अनादी से अब तक, नहिं किंचित् भी सुख पाया हूँ ॥3॥

अब काल लब्धि को पाकर मैं, भव भ्रमणों से अकुलाया हूँ।
निज शुद्ध स्वभाव प्रगट करके, स्थिर पद पाने आया हूँ ॥
हे कुंथुनाथ ! मैं नमूँ तुम्हें, अब दया करो भव फेर हरो।
तुम ही हो शरणागत रक्षक, अब मेरी बार न देर करो ॥4॥

यह हस्तिनागपुर तीर्थ बना, प्रभु सूरसेन के घर जन्में।
श्रीकांता माता मुदित हुई, जब गोद में खेला था तुमने ॥
श्रावण वदि दशमी गर्भ तिथी, बैसाख सुदी एकम जनि[1] की।
फिर वही तिथी दीक्षा दिन की, सित चैत्र तृतीया केवल की ॥5॥

इक सौ चालिस कर देह तुंग, आयू पंचानवे सहस बरस।
अज लांछन कनक वर्ण सुन्दर, तुम कामदेव चक्रेश्वर प्रभु ॥
बैसाख सुदी एकम तिथि में, सम्मेदाचल से मुक्ति वरी।
मुझको भव दुःख से मुक्त करो, बस यही प्रार्थना है मेरी ॥6॥

(18) श्री अरजिन स्तुति

अरनाथ ! स्वयं अरि कर्मों को, घाता अर्हत्पदवी पायी।
त्रिभुवन के नाथ उंदर तिष्ठे, मित्रसेना माता हर्षायी ॥
सुरपूज्य सुदर्शन जनक अहो, है धन्य हस्तिनापुरी अहा।
फाल्गुन वदि तीज गर्भ मंगल, मगसिर सुदि चौदस जन्म लहा ॥1॥

मगसिर सित दशमी दीक्षा ली, बाह्याभ्यंतर तप तपते थे।
कार्तिक सित बारस के दिन में, केवलज्ञानी रवि चमके थे ॥
चौरासि हजार वर्ष आयू, तनु इक सौ बीस हाथ सुन्दर।
मछली लान्छन युत कनक वर्ण, प्रभु कामदेव औ चक्रेश्वर ॥2॥

शुभ चैत्र अमावस के प्रभुवर, सम्मेदाचल से मृत्युजयी।
निज भेद विज्ञान प्रगट करके, अपने को पाया आप सही ॥
मैं भी प्रभु चरण कमल वंदूँ, यह कृपा प्रसाद मिले मुझको।
मैं मुझमें मुझको प्राप्त करूँ, मुझसे ही सिद्धि मिले मुझको ॥3॥

---

1. जन्म

(19) श्री मल्लिनाथजिन स्तुति

जिन काम मोह यमराज मल्ल, तीनों को जीत विजेता हैं।
वे मल्लिजिनेश्वर मेरे भी, दुष्कर्म मल्ल के भेत्ता हैं ॥
मिथिला नगरी के कुंभराज, औ प्रजावती मंगलकारी।
शुभ चैत्र सुदी एकम के दिन, था हुआ गर्भ मंगल भारी ॥1॥

मगसिर सुदि ग्यारस के प्रभु को, सुरशैल शिखर पर ले जाके।
सुरदेवी सह इंद्रादिकगण, अभिषेक किया गुण गा-गा के ॥
मगसिर सित ग्यारस दीक्षा ली, वदि पौष दूज[1] ध्यानाग्नि जला।
सब घाति कर्म को भस्म किया, उस ही क्षण ज्ञान प्रभात खिला ॥2॥

सौ हाथ देह काँचन कांती, थिति पचपन सहस वर्ष जानो।
मल्लिका कुसुम सम सुरभिततनु, कलशा लाञ्छन से पहचानो ॥
फाल्गुन सित पंचमि तिथि आई, सम्मेदगिरी पर ध्यान धरा।
पंचम गति की लक्ष्मी आई, उसने प्रभु को था स्वयं वरा ॥3॥

हे मल्लि प्रभो ! मेरे त्रय विध, मल को हरिए निर्मल करिए।
मुरझाई सुखवल्ली मेरी, वचनामृत से पुष्पित करिये ॥
मैं परमानंद सुखामृत के, झरने का अनुभव प्राप्त करूँ।
प्रभु शीघ्र हमारे क्लेश हरो, निज का आह्लाद विकास करूँ ॥4॥

(20) श्री मुनिसुव्रतजिन स्तुति

मुनिसुव्रत ! सुव्रत के दाता, भव हर्ता मुक्ति विधाता हो।
मैं नमूँ तुम्हें मेरे स्वामी, मुझको भी सिद्धि प्रदाता हो ॥
यह राजगृही नगरी धन है, त्रैलोक्य गुरू यहाँ थे जन्में।
है धन्य सुमित्र पिता माता, सोमा भी धन्य हुई जग में ॥1॥

---

1. उत्तरपुराण व कल्याणमाला।

श्रावण वदि दूज गर्भ बारस[1], वैशाख वदी में जन्म लहा।
बैशाख वदी दशमी नवमी, क्रम से दीक्षा औ ज्ञान लहा ॥
अस्सी कर तुंग शरीर कहा, प्रभु नील वर्ण अतिशय सुन्दर।
थी तीस हजार वर्ष आयू, कच्छप[2] लांछन से जाने नर ॥2॥

फाल्गुन वदि बारस को गिरि पर, प्रभु ने सब कर्म विनाशा था।
सुरगण ने आकर के तत्क्षण, शिव हेतु नमाया माथा था ॥
भगवन् ! मैं वर्ण स्पर्श गंध, औ रस से रहित अरूपी हूँ।
बस तव भक्ति से व्यक्ति हो, मैं एक स्वयं चिद्रूपी हूँ ॥3॥

हे देव ! तुम्हारी भक्ति का, फल एक यही बस मिल जावे।
जब प्राण निकलते हों मेरे, तब नाम मंत्र जिह्वा गावे ॥
नहिं पीड़ा हो नहिं हो कषाय, बस कंठ अकुंठित बना रहे।
हे नाथ ! तुम्हारे चरणों की, भक्ति में ही मन रमा रहे ॥4॥

(21) श्री नमिजिन स्तुति

नमिनाथ ! नमन करते तुमको, मुनिगण सुर नर खेचर आके।
मैं नमूँ सदा तुम चरण कमल, मम रोग शोक संकट भागे ॥
मिथिला में विजय पिता माता, वप्पिला उन्हें सुरनर पूजें।
आश्विन वदि दूज गर्भ आए, उस तिथि को भी अब तक पूजें ॥1॥

आषाढ़ वदी दशमी जन्मे, इन्द्रों ने उत्सव नृत्य किया।
इस ही तिथि में परिग्रह छोड़ा, प्रभु ने निज में विश्राम किया ॥
मगसिर सित ग्यारस में प्रभु के, पूर्णैक ज्ञान रवि उदित हुआ।
भव्यों के हृदय सरोज खिले, बहु दिन तक शिव पथ प्रगट रहा ॥2॥

तनु साठ हाथ है कनक वर्ण, आयू दस सहस वर्ष प्रभु की।
बैसाख वदी चौदस के दिन, निर्वाण पधारे नमि जिन जी ॥
नीलोत्पल चिन्ह सहित भगवन् ! सब आधी व्याधि विनाश करो।
मुझ भाक्तिक पर करुणा करके, तत्क्षण मेरे भव पाश हरो ॥3॥

---

1. कल्याणमाला। 2. कछुआ।

(22) श्री नेमिजिन स्तुति

भव वन में भ्रमते-भ्रमते अब, मुझको कथमपि विज्ञान मिला।
हे नेमि प्रभो ! अब नियम बिना, नहिं जाने पावे एक कला ॥
मैं निज से पर को पृथक् करूँ, निज समरस में ही रम जाऊँ।
मैं मोह ध्वांत को नाश करूँ, निज ज्ञान सूर्य को प्रकटाऊँ ॥1॥

द्वारावति में प्रभु जन्में तक, रत्नों की वर्षा खूब हुई।
धन धन्य समुद्रविजय राजा, कृतकृत्य शिवा देवी भी थी ॥
कार्तिक सुदि छठ के गर्भागम, श्रावण सुदि छट्ठ जन्म लीना।
यौवन में राजमती के संग, परिजन ने ब्याह रचा दीना ॥2॥

पशु बंधन को देखा प्रभु ने, तत्क्षण सब बंधन तोड़ दिया।
राजीमति मोह परिग्रह तज, तपश्री से नाता जोड़ लिया ॥
श्रावण सुदि छट्ठ सुखद प्यारी, सिरसा वन में जा ध्यान धरा।
आश्विन सुदि एकम आते ही, कैवल्यश्री ने आन वरा ॥3॥

तब राजमती भी दीक्षा ले, आर्या में गणिनी मान्य हुई।
प्रभु ने शिव का पथ दर्शाया, धर्मामृत वर्षा खूब हुई ॥
तनु चालिस हाथ प्रमाण कहा, प्रभु आयू एक हजार वर्ष।
वैडूर्य[1] मणी सम कांति अहो, प्रभु शंख चिन्ह से हैं चिन्हित ॥4॥

प्रभु समवसरण में कमलासन, पर चतुरंगुल से अधर रहें।
चउदिश में प्रभु का मुख दीखे, अतएव चतुर्मुख ब्रह्मा हैं ॥
प्रभु के विहार में चरण कमल, तल स्वर्ण कमल खिलते जाते।
बहु कोसों तक दुर्भिक्ष टले, षट् ऋतुज फूल फल खिल जाते ॥5॥

---

1. नीलमणि।

तरुवर अशोक था शोक रहित, सिंहासन रत्न खचित सुन्दर।
छत्रत्रय मुक्ताफल लंबित, भामंडल भवदर्शी मनहर ॥
सुरदुंदुभि बाजे बाज रहे, ढुरते हैं चौंसठ श्वेत चमर।
सुर पुष्पवृष्टि नभ से बरसे, दिव्यध्वनि फैले योजन भर ॥6॥

आषाढ़ सुदी सप्तमि तिथि थी, प्रभु ऊर्जयंत से सिद्ध हुए।
श्रीकृष्ण तथा बलदेव आदि, तुम पूजें ध्यावें भक्ति लिए ॥
हे भगवन् ! तुम बाह्याभ्यंतर, अनुपम लक्ष्मी के स्वामी हो।
दो मुझे अनंतचतुष्टय श्री, "सज्ज्ञानमती" सिद्धिप्रिय जो ॥7॥

(23) श्री पार्श्वजिन स्तुति

भवसंकट हर्ता पार्श्वनाथ ! विघ्नों के संहारक तुम हो।
हे महामना हे क्षमाशील ! मुझमें भी पूर्ण क्षमा भर दो ॥
यद्यपि मैंने शिवपथ पाया, पर यह विघ्नों से भरा हुआ।
इन विघ्नों को अब दूर करो, सब सिद्धि लहूँ निर्विघ्नतया ॥1॥

वाराणसि नगरी धन्य हुई, धन धन्य हुए सब नर नारी।
हे अश्वसेननंदन[1] ! तुम से, ब्राह्मी[2] माँ भी मंगलकारी ॥
बैसाख वदी वह दूज भली, माता उर आप पधारे थे।
श्री आदि देवियों ने आकर, माता से प्रश्न विचारे थे ॥2॥

शुभ पौष वदी ग्यारस तिथि थी, जब आए प्रभु साक्षात् यहाँ।
शैशव में सुर संग खेल रहे, अहियुग[3] को दीना मंत्र महा ॥
तब नागयुगल धरणेन्द्र तथा, पद्मावती होकर भक्त बने।
शुभ पौष वदी ग्यारस के दिन, प्रभु दीक्षा ले मुनि श्रेष्ठ बने ॥3॥

तत्क्षण मनपर्ययज्ञानी हो, सब ऋद्धी से परिपूर्ण हुए।
इक समय सघन वन के भीतर, प्रभु निश्चल ध्यानारूढ़ हुए ॥

---

1. उत्तरपुराण में विश्वसेन नाम है। 2. 'वामादेवी' भी नाम है। 3. सर्प-सर्पिणी।

कमठासुर ने उपसर्ग किया, अग्नी ज्वाला को उगल-उगल।
पत्थर फेंके मूसलधारा, वर्षायी आँधी उछल-उछल ॥4॥

निष्कारण ही कमठासुर ने, दश भव तक बैर निकाला था।
प्रभु को दुःख दे देकर उसने, खुद को दुर्गति में डाला था॥
प्रभु महासहिष्णु क्षमा सिन्धु, भव-भव से सहते आये हैं।
तन से ममता को छोड़ दिया, नहिं किंचित् भी घबराये हैं ॥5॥

प्रभु क्षपक श्रेणि में चढ़ करके, मोहनी कर्म का नाश किया।
उस ही क्षण धरणीपति पद्मावती, आ करके बहु भक्ति किया॥
प्रभु को मस्तक पर धारण कर, ऊपर से फण का छत्र किया।
प्रभुवर ने उस ही क्षण में ही, कैवल्यश्री को वरण किया ॥6॥

पृथ्वी से बीस हजार हाथ, ऊपर पहुँचे अर्हन्त बने।
इन्द्रों के आसन काँप उठे, प्रभु समवसरण गगनांगण में॥
वदि चैत्र चतुर्दश[1] तिथि उत्तम, जब प्रभु में ज्ञान प्रकाश हुआ।
उस स्थल का उस ही क्षण से, 'अहिच्छत्र' तीर्थ यह नाम हुआ ॥7॥

नव हाथ देह सौ वर्ष आयु, मरकतमणि सम आभाधारी।
अहि[2] चिन्ह सहित वे पार्श्व प्रभो ! मुझको हों नित मंगलकारी॥
श्रावण सुदि सप्तमि तिथि के दिन, सिद्धीकांता से प्रीति लगी।
मैं नमूँ तुम्हें पल-पल क्षण-क्षण, मेरी हो सर्वंसहा मती ॥8॥

(24) श्री वीरजिन स्तुति

महावीर वीर सन्मति भगवन् ! अतिवीर सदा मंगल करिये।
हे वर्धमान ! भव वारिधि से, अब मुझको पार तुरत करिये॥
वह कुंडपुरी जग पूज्य हुई, सिद्धार्थ दुलारे जन्मे थे।
प्रियकारिणी माँ की गोदी में, त्रिभुवन के गुरुवर खेले थे ॥1॥

1. उत्तरपुराण में चौदश तिथि है किन्तु कल्याणमाला पुस्तक व चालू पुजाओं में चतुर्थी तिथि है। 2. सर्प।

आषाढ़ सुदी छठ पूज्य हुई, जब गर्भ में प्रभु अवतार लिया।
माता त्रिशला की सेवा का, सुर ललनाओं ने भार लिया ॥
शुभ चैत्र सुदी तेरस का दिन, है धन्य धन्य वह सुखद घड़ी।
जब वर्द्धमान ने जन्म लिया, नभ से सुर पंक्ती उमड़ पड़ी ॥2॥

प्रभु शैशव में अजगर फण पर, चढ़कर संगम सुर जीता था।
नहिं ब्याह किया नहिं राज्य किया, जनता का मन भी फीका था ॥
मगसिर वदि दशमी धन्य हुई, जब केशलोंच कीना तुमने।
तप तपते बारह वर्षों तक, प्रभु मौन विहार किया तुमने ॥3॥

अतिमुक्तक वन में ध्यान लीन, थे भव[1] ने आ उपसर्ग किया।
तब अचलित प्रभु को देख स्वयं, भार्या सहपूजा भक्ति किया ॥
बैशाखसुदी दशमी तिथि में, केवल रवि किरणें प्रकट हुईं।
शुभ समवसरण था रचा हुआ, दिव्यध्वनि फिर भी खिरी नहीं ॥4॥

श्रावण श्यामा[2] एकम उत्तम, गौतम गणधर जब आए हैं।
विपुलाचल पर ध्वनि प्रगट हुई, मुनिगण सुर नर हर्षाए हैं ॥
हे वीर प्रभो ! तव शासन में, मुझको रत्नत्रय निधी मिली।
मैं भक्ति सहित प्रणमूँ तुमको, मेरी मन कलियाँ आज खिलीं ॥5॥

तनु सात हाथ कांचन कांति, आयू बाहत्तर वर्ष कही।
है चिन्ह मृगेन्द्र प्रभो ! तेरा, जो ध्यावे पावे मोक्ष मही ॥
कार्तिक वदि चौदस रात्रि अंत, आमावस का प्रत्यूष कहा।
सब कर्म नाश प्रभु मोक्ष गए, स्वात्मोत्थ सहज आनंद लहा ॥6॥

पावापुरि के उपवन में जो, सरवर है कमल खिले उसमें।
प्रभु के निर्वाण कल्याणक से, अब तक भी कमल खिले सच में ॥
देवों ने आकर पूजा की, महावीर प्रभू त्रिभुवन पति की।
अँधियारी में दीपक ज्वाले, तब से ही दीपावली हुयी ॥7॥

---

1. रूद्र। 2. वदी।

हे वीर प्रभो ! मंगलमय तुम, लोकोत्तम शरणभूत तुम ही।
भव भव के संचित पाप पुँज, इक क्षण में नष्ट करो सब ही ॥
मैं बारम्बार नमूँ तुमको, भगवन् ! मेरे भव त्रास हरो।
"सज्ज्ञानमती" सिद्धी देकर, स्वामिन् ! अब मुझे कृतार्थ करो ॥8॥

(25) श्री समुच्चय चौबीस जिन स्तुति

श्री चौबीसों तीर्थंकर ही, भव्यों के शिव पथ नेता हैं।
वे कर्म अचल के भेत्ता हैं, त्रिभुवन के ज्ञाता दृष्टा हैं ॥
मैं उनको पुनः पुनः प्रणमूँ, नित प्रति ध्याऊँ औ गुण गाऊँ।
यावत् नहिं सिद्धि मिले तावत्, जिन चरणों में ही रम जाऊँ ॥1॥

चन्द्रप्रभु पुष्पदंत शशि सम, छवि पार्श्व सुपार्श्व हरित तनु हैं।
श्री वासुपूज्य औ पद्मप्रभू, तनु लाल कमल सम सुन्दर हैं ॥
नेमी मुनिसुव्रत नीलमणी, जिन सोलह काँचन तनु सुन्दर।
ये वर्ण सहित भी वर्ण रहित, चिन्मूर्ति अमूर्तिक परमेश्वर ॥2॥

श्री वासुपूज्य मल्ली नेमी, श्री पार्श्वनाथ महावीर कहे।
ये पाँचों बाल ब्रह्मचारी, मेरे मन में नित वास करें ॥
श्री वृषभदेव, जिन वासुपूज्य, नेमी प्रभु पर्यंकासन से।
बाकी सब जिनवर कायोत्सर्ग, आसन से छूटे कर्मों से ॥3॥

श्री वृषभदेव अष्टापद से, श्री वासुपूज्य चंपापुरि से।
श्री नेमि ऊर्जयंत गिरि से, महावीर प्रभू पावापुरि से ॥
सम्मेदशिखर से बीस प्रभू, तीर्थंकर मुक्ति पधारे हैं।
इन धाम को नित प्रति वंदूँ मैं, ये पावन करने वाले हैं ॥4॥

श्री शांति कुंथु अर तीर्थंकर, कुरुवंश तिलक त्रिभुवन मणि हैं।
मुनिसुव्रत नेमी यदुवंशी, श्री पार्श्व उग्रकुल के मणि हैं ॥
श्री वीर प्रभू नाथ वंशी, औ शेष जिनेश्वर भुवि भास्कर।
इक्ष्वाकुवंश चूड़ामणि हैं, हमको होवें अविचल सुखकर ॥5॥

जिनवर के पंच कल्याणक से, जन्म स्थल औ मुक्ति स्थल से।
औ मात पिता के नाम, सुकीर्तन से वंशों से चिन्हों से ॥
जिन आयु वर्ण तनु ऊँचाई, के वर्णन से चौबिस जिन के।
अगणित गुणगण के कीर्तन से, मैंने स्तुति की बहु रुचि से ॥6॥

चौथे युग में जब तीन वर्ष, पन्द्रह दिन और अठमास बचे।
तब वीर प्रभू कार्तिक मावस, को कर्मनाश शिव धाम बसे ॥
अब तक पच्चीस शतक वर्षों, तक शासन चलता आया है।
पच्चीस शतक का उत्सव यह, जन जन ने खूब मनाया है ॥7॥

यह उत्सव एक वर्ष तक का, युग युग तक याद दिलाएगा।
श्री वीर प्रभू की वाणी को, सब जन जन में पहुँचाएगा ॥
श्री वीर प्रभू का धर्मचक्र, सर्वत्र धर्म की जय करता।
सर्वत्र भ्रमण करके जग में, हर जन जन के सब अघ हरता ॥8॥

श्री वीर प्रभू का यह शासन, सब जग में मंगलकारी है।
सब जग में उत्तम मान्य हुआ, सब ही जन को सुखकारी है ॥
ये ही शरणं शरणागत को, अतएव सदा जयशाली है।
इच्छित से अधिक भी फलदायी, यह अद्भुत महिमाशाली है ॥9॥

इस विधि चौबीसों जिनवर को, मैंने एकाग्रमना होके।
अति भक्ती से स्तुति की है, यह फले अनंतगुणा होके ॥
जो भी कल्याण कल्पतरु इस, स्तुति को नित प्रति पढ़ते हैं।
वे निश्चित ही "सज्ज्ञानमती" ईप्सित लक्ष्मी को वरते हैं ॥10॥

दोहा— वीर अब्द पच्चीस सौ, एक महागुण खान।
श्रावण शुक्ला पूर्णिमा, गुरूवार दिन जान ॥11॥

शांतिनाथ के जन्म से, पावन शुभ स्थान।
"ज्ञानमती" श्री आर्यिका, स्तव रचा महान् ॥12॥
पढ़े सुने जो भाव से, नाशे क्लेश अशेष।
चौबीसों जिनराजवर, मंगल करें हमेश ॥13॥
यावत् जिनशासन रवी, करे जगत उद्योत।
तावत् यह जिनसंस्तुती, करे भविक मन मोद ॥14॥

❑

शांति भक्ति

(श्री पूज्यपाद आचार्य रचित)

(पद्यानुवाद—गणिनी आर्यिका ज्ञानमती)

भगवन् ! सब जन तव पद युग की शरण प्रेम से नहिं आते।
उसमें हेतु विविधदुःखों से भरित घोर भववारिधि है ॥
अतिस्फुरित उग्र किरणों से व्याप्त किया भूमंडल है।
ग्रीषम ऋतु रवि राग कराता इंदुकिरण, छाया, जल में ॥1॥

क्रुद्धसर्प आशीविष डसने से विषाग्नियुत मानव जो।
विद्या औषध मंत्रित जल हवनादिक से विष शांती हो ॥
वैसे तव चरणाम्बुज युग स्तोत्र पढ़े जो मनुज अहो।
तनु नाशक सब विघ्न शीघ्र अति शांत हुये आश्चर्य अहो ॥2॥

तपे श्रेष्ठ कनकाचल की शोभा से अधिक कांतियुत देव।
तव पद प्रणमन करते जो पीड़ा उनकी क्षय हो स्वयमेव ॥
उदित रवी की स्फुट किरणों से ताड़ित हो झट निकल भगे।
जैसे नाना प्राणी लोचन द्युतिहर रात्री शीघ्र भगे ॥3॥

त्रिभुवन जन सब जीत विजयि बन अतिरौद्रात्मक मृत्यूराज।
भव भव में संसारी जन के सन्मुख धावे अति विकराल ॥
किस विध कौन बचे जन इससे काल उग्र दावानल से।
यदि तव पाद कमल की स्तुति नदी बुझावे नहीं उसे ॥4॥

लोकालोक निरन्तर व्यापी ज्ञानमूर्तिमय शांति विभो।
नानारत्न जटित दण्डेयुत रुचिर श्वेत छत्रत्रय हैं ॥
तव चरणाम्बुज पूतगीत रव से झट रोग पलायित हैं।
जैसे सिंह भयंकर गर्जन सुन वन हस्ती भगते हैं ॥5॥

दिव्यस्त्रीदृगसुन्दर विपुला श्रीमेरू के चूड़ामणि।
तव भामंडल बाल दिवाकर द्युतिहर सबको इष्ट अति ॥
अव्याबाध अचिंत्य अतुल अनुपम शाश्वत जो सौख्य महान्।
तव चरणारविंदयुगलस्तुति से ही हो वह प्राप्त निधान ॥6॥

किरण प्रभायुत भास्कर भासित करता उदित न हो जब तक।
पंकजवन नहिं खिलते निद्राभार धारते हैं तब तक ॥
भगवन् ! तव चरणद्वय का हो नहीं प्रसादोदय जब तक।
सभी जीवगण प्रायः करके महत् पाप धारें तब तक ॥7॥

शांति जिनेश्वर शांतचित्त से शांत्यर्थी बहु प्राणीगण।
तव पादाम्बुज का आश्रय ले शांत हुये हैं पृथिवी पर ॥
तव पदयुग की शांत्यष्टकयुत स्तुति करते भक्ती से।
मुझ भाक्तिक पर दृष्टि प्रसन्न करो भगवन् ! करुणा करके ॥8॥

शशि सम निर्मल वक्त्र शांतिजिन शीलगुण व्रत संयम पात्र।
नमूँ जिनोत्तम अंबुजदृग को अष्टशतार्चित लक्षण गात्र ॥9॥

चक्रधरों में पंचमचक्री इन्द्र नरेन्द्र वृंद पूजित।
गण की शांति चहूँ षोडश तीर्थंकर नमूँ शांतिकर नित ॥10॥

तरुअशोक सुरपुष्पवृष्टि दुंदुभि दिव्यध्वनि सिंहासन।
चमर छत्र भामंडल ये अठ प्रातिहार्य प्रभु के मनहर ॥11॥

उन भुवनार्चित शांतिकरं शिर से प्रणमूँ शांति प्रभु को।
शांति करो सब गण को, मुझको पढ़ने वालों को भी हो ॥12॥

मुकुटहारकुंडल रत्नों युत इन्द्रगणों से जो अर्चित।
इन्द्रादिक से सुरगण से भी पादपद्म जिनके संस्तुत ॥
प्रवरवंश में जन्में जग के दीपक वे जिन तीर्थंकर।
मुझको सतत् शांतिकर होवें वे तीर्थेश्वर शांतीकर ॥13॥

संपूजक प्रतिपालक जन यतिवर सामान्य तपोधन को।
देश राष्ट्र पुर नृप के हेतू हे भगवन् ! तुम शांति करो ॥14॥

सभी प्रजा में क्षेम नृपति धार्मिक बलवान् जगत् में हो ।
समय समय पर मेघवृष्टि हो आधि व्याधि का भी क्षय हो ॥
चौर मारि दुर्भिक्ष न क्षण भी जग में जन पीड़ाकर हो।
नित ही सर्व सौख्यप्रद जिनवर धर्मचक्र जयशील रहो ॥15॥

वे शुभद्रव्य क्षेत्र अरु काल भाव वर्तें नित वृद्धि करें।
जिनके अनुग्रह सहित मुमुक्षु रत्नत्रय को पूर्ण करें ॥16॥

घातिकर्म विध्वंसक जिनवर केवलज्ञानमयी भास्कर।
करें जगत में शांति सदा वृषभादि जिनेश्वर तीर्थंकर ॥17॥

अंचलिका

हे भगवन् ! श्री शांतिभक्ति का कायोत्सर्ग किया उसके।
आलोचन करने की इच्छा करना चाहूँ मैं रुचि से ॥
अष्टमहा प्रातिहार्य सहित जो पंचमहाकल्याणक युत।
चौंतिस अतिशय विशेष युत बत्तिस देवेन्द्र मुकुट चर्चित ॥
हलधर वासुदेव प्रतिचक्री ऋषि मुनि यति अनगार सहित।
लाखों स्तुति के निलय वृषभ से वीर प्रभू तक महापुरुष ॥
मंगल महापुरुष तीर्थंकर उन सबको शुभ भक्ती से।
नित्यकाल मैं अर्चूं पूजूँ वंदूँ नमूँ महामुद से ॥
दुःखों का क्षय कर्मों का क्षय हो मम बोधिलाभ होवे।
सुगति गमन हो समाधिमरणं , मम जिनगुण संपति होवे ॥

❑

श्री ऋषिमण्डल स्तोत्र

पद्यानुवाद (शंभु छंद)

आदी अक्षर 'अ' अंताक्षर 'ह', इन दो को ले लेने में।
'आ' से लेकर 'स' पर्यंते, सब अक्षर आ जाते इनमें ॥
अग्नी ज्वाला 'र' बीजाक्षर, ऊपर यह बिन्दु सहित सुंदर।
'अर्हं' यह मंत्र बना सुंदर, यह मंत्र मनोमल शोधनकर ॥1॥

ॐ अर्हंतों को नमस्कार, ॐ सिद्धों को द्वय नमस्कार।
ॐ सर्वसूरि को नमस्कार, ॐ पाठक गण को नमस्कार ॥
ॐ सर्व साधु को नमस्कार, ॐ सम्यग्दृग् को नमस्कार।
ॐ शुद्ध ज्ञान को नमस्कार, ॐ चारित को द्वय नमस्कार ॥2॥

इन अरहंतादि आठपद को, निज निज बीजाक्षर युत करके।
अठदिश में स्थापन करते, ये लक्ष्मीप्रद हैं सुख करते ॥
पहला पद शिर का रक्षक हो, दूजा मस्तक का त्राण करे।
तीजा पद दोनों दृग् रक्षे, चौथा पद नासा त्राण करे ॥3॥

पंचम मुख का रक्षाकर हो, छट्ठा पद ग्रीवा को रक्षे।
सप्तम पद नाभी तक रक्षे, अष्टम पद पादों तक रक्षे ॥
पहले प्रणवाक्षर ॐ पुनः 'ह' को रकार और बिंदु सहित।
दूजी तीजी पंचम छट्ठी, सप्तम अष्टम दशवीं द्वादश ॥4॥

इन मात्रा युत करके पाँचों, पद के पहले पहले अक्षर।
हो सम्यग्दर्शन ज्ञान और, चारित्र विभक्ती युत सुखकर ॥
फिर ह्रीं नमः बस इसविध से, अतिशायी मंत्र बना सुन्दर।
यह ऋषिमंडलस्तवन यंत्र, का मूलमंत्र है श्रेयस्कर ॥5॥

नव बीजाक्षर युत सिद्धमंत्र, अष्टादश शुद्धाक्षर इसमें।
आराधक को शुभफलदायी, अति भक्ती से जपिये नितमें ॥

ॐ ह्रां ह्रिं ह्रुं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा
सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो ह्रीं नमः ॥

जंबूतरुधारी प्रथमद्वीप, यह लवणोदधि से वेष्टित है।
आठों दिश अधिपति अर्हदादि, इन आठ पदों से शोभित है ॥6॥

इस जंबूद्वीप मध्य मेरू, जो लाखों कूटों से शोभे।
ऊपर ऊपर ज्योतिर्वासी, देवों के भ्रमणों से शोभे ॥
इस पर स्थापित ह्रीं मंत्र, उस पर अर्हन्त बिंब सुन्दर।
उनको ललाट में स्थित कर, मैं नमूँ नित्य कर्माञ्जनहर ॥7॥

अर्हंतदेव ये अक्षय हैं, निर्मल विशाल अज्ञान रहित।
निर्मान शांत इच्छाविरहित, शुभ सार सारतर औ सात्विक ॥
राजस कर्मों के नाश हेतु, तामस है विरस शुद्ध तेजस।
ज्योत्स्नासम साकार तथापी, निराकर औ सरस विरस ॥8॥

पर उत्तम हैं उत्तमतर औ, उत्तमतम सर्वोत्तम इससे।
पर तथा परापर परातीत, पर का परपरापरं कहते ॥
तनसहित-सकल तनरहित निकल, संतुष्ट पूर्णभृत भ्रांतिरहित।
निर्लेप निरंजन निराकांक्ष, संशय विरहित क्षणभंगरहित ॥9॥

ब्रह्मा ईश्वर औ बुद्ध शुद्ध, वे महादेव ज्योतीस्वरूप।
सब लोकालोकप्रकाशी हैं, अर्हंत जिनेश्वर चित्स्वरूप ॥
जो सांत सरेफ बिन्दुमंडित, चौथे स्वर से युत होता है।
वह 'ह्रीं' बीज ध्यानादि योग्य, अर्हंत नाम का होता है ॥10॥

वह श्वेत वर्ण है श्याम वर्ण है, लाल वर्ण औ नील वर्ण।
औ पीतवर्ण भी है उत्तम, सर्वोत्तम माना महावर्ण ॥
इस ह्रीं बीज में स्थित हैं, निज निज वर्णों से युक्त सभी।
वृषभादि जिनेश्वर इस स्तोत्र, में संस्थित ध्यानयोग नित भी ॥11॥

सित अर्ध चंद्रसम नाद, बिन्दु नीली मस्तक है लालवर्ण।
सब तरफ हकार स्वर्णसम है, ईकार कहा है हरित वर्ण ॥
इस तरह 'ह्रीं' है पंचवर्ण, उन उन वर्णों के तीर्थंकर।
उस उस थल में स्थापित कर, उन सबको नमन करो सुखकर ॥12॥

श्री चंद्रप्रभ औ पुष्पदंत, शशिसदृश नाद में स्थित हैं।
श्री नेमिनाथ औ मुनिसुव्रत, बिंदू के मध्य विराजित हैं ॥
श्री पद्मप्रभू औ वासुपूज्य, मस्तक के मध्य अधिष्ठित हैं।
श्री जिनसुपार्श्व औ पार्श्वनाथ, ईकार वर्ण के आश्रित हैं ॥13॥

सोलह तीर्थंकर शेष सभी, ह और रकार में राजित हैं।
मायाबीजाक्षर ह्रीं मध्य, चौबीसों जिनवर आश्रित हैं ॥
ये रागद्वेष औ मोह रहित, सब पापरहित चौबिस जिनवर।
संपूर्ण लोक में भव्यों के, हेतू होवें वे नित सुखकर ॥14॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, सर्पों से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, गोहों से मुझे न हो बाधा ॥15॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, बिच्छू से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, नागिनि से मुझे न हो बाधा ॥16॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, काकिनि से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, डाकिनी से मुझे न हो बाधा ॥17॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, साकिनी से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, राकिनी से मुझे न हो बाधा ॥18॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, लाकिनी से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, शाकिनी से मुझे न हो बाधा ॥19॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, हाकिनी से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, भैरव से मुझे न हो बाधा ॥20॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, राक्षस से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, व्यंतर से मुझे न हो बाधा ॥21॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, भेकस से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, लीनस से मुझे न हो बाधा ॥22॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, नवग्रह से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, चोरों से मुझे न हो बाधा ॥23॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, अग्नी से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, सींग वालों से नहिं हो बाधा ॥24॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, दाढ़वालों से नहिं हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, पक्षी से मुझे न हो बाधा ॥25॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, दैत्यों से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, मेघों से मुझे न हो बाधा ॥26॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, सिंहों से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, सूकर से मुझे न हो बाधा ॥27॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, चीतों से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, हाथी से मुझे न हो बाधा ॥28॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, राजा से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, शत्रु से मुझे न हो बाधा ॥29॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, ग्रामिण से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, दुर्जन से मुझे न हो बाधा ॥30॥

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, रोगों से मुझे न हो बाधा ॥
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, सब जन से मुझे न हो बाधा ॥31॥

श्री गौतम गुरु की जो मुद्रा, उससे जग में श्रुत ज्ञान लाभ।
उनसे भी अधिक ज्योतिधारी, अर्हंत सर्व निधि ईश ख्यात ॥
पातालवासि भावन व्यंतर, भूपीठवासि ज्योतिष सुरगण।
ये देव करें रक्षा मेरी, दिव के भी कल्पवासी सुरगण ॥32॥

जो अवधिज्ञान ऋद्धीयुत मुनि, जो परमावधि ऋद्धीयुत हैं।
वे मेरी रक्षा करें सर्व, तरफी वे सभी दिव्य मुनि हैं ॥
ॐ श्री ह्री धृति लक्ष्मी गौरी, चंडी सरस्वती जया अम्बा।
विजया क्लिन्ना अजिता नित्या, औ मद्द्रवा औ कामाँगा ॥33॥

कामवाणा देवी सानंदा, सुरि नंदमालिनी औ माया।
मायाविनि रौद्री कलादेवि, कालीदेवी औ कलिप्रिया ॥
जिनशासन रक्षाकर्त्री ये, सब महादेवियाँ हैं जग में।
ये मुझको कांती लक्ष्मी धृति, मति देवें क्षेम करें जग में ॥34॥

दुर्जन वेताल पिशाच भूत, औ क्रूर दैत्य गण हैं जितने।
देवाधिदेव के प्रभाव से, वे सब उपशांत रहें जग में ॥
श्री ऋषिमंडल स्तोत्र दिव्य, यह गोप्य तथा अतिदुर्लभ है।
जगरक्षाकृत निर्दोष तीर्थकृत, वीरप्रभू से भाषित है ॥35॥

रण नृपदरबार अग्नि जल गज, औ दुर्ग सिंह के संकट में।
शमसान विपिन में मंत्र जाप्य, मनुजों का त्राण करे सच में ॥
जो राज्यभ्रष्ट निज राज्य लहे, पदभ्रष्ट मनुज निज पद पाते।
इसमें सन्देह नहीं लक्ष्मी, से च्युत निजलक्ष्मी भी पाते ॥36॥

भार्या अर्थी भार्या लभते, सुत अर्थी सुत को पा जाते।
स्तोत्र स्मरण मात्र से ही, धन अर्थी धन भी पा जाते ॥
कांचन रूपा अथवा कांसे, पर लिखकर जो पूजे इसको।
उसके घर शाश्वत अष्टमहा, सिद्धी रहती हैं यह समझो ॥37॥

यह मंत्र भूर्जपत्रे पर लिख, मस्तक ग्रीवा या बाहू में।
जो धारे दिव्य यंत्र उसके, सब भय विनाश होते क्षण में ॥
वह भूत प्रेत ग्रह यक्षदैत्य, औ पिशाच गण के कष्टों से।
छुट जाता नहिं संशय इसमें, कफ वात पित्त के रोगों से ॥38॥

जो अधो मध्य औ ऊर्ध्वलोक, में जिनप्रतिमायें शाश्वत हैं।
उनके दर्शन स्तुति वंदन से , जो फल वह स्तुति पठन का है ॥
यह महास्तोत्र अति गोपनीय, जिस किसको नहिं देने का है।
मिथ्यादृष्टी को देने से, शिशुघात पाप पद पद पर है ॥39॥

आचाम्ल आदि तप कर चौबिस, जिनवर की पूजाविधि करके।
जप आठ हजार करे विधिवत्, सब कार्य सिद्ध होते उसके ॥
जो प्रतिदिन प्रातः इसी मंत्र की, एक सौ आठ जप करते हैं।
उनके शरीर में व्याधि न हो, सुख संपत्ती वो लभते हैं ॥40॥

जो आठ मास तक नित प्रातः, इस महास्तोत्र को पढ़ते हैं।
वे निज में तेजपुंज अर्हन्त, बिम्ब का दर्शन करते हैं ॥
अर्हन्तबिंब दर्शन होने, पर निश्चित ही सप्तम भव में।
वे मुक्तीपद पा लेते हैं, परमानन्द संपतियुत सच में ॥41॥

दोहा

श्री गुणनंदि मुनीन्द्रकृत, ऋषिमंडल स्तोत्र।
"ज्ञानमती" मैं आर्यिका, किया पद्य स्तोत्र ॥42॥
स्तोत्र महास्तोत्र यह, सब स्तुति में सर्वोच्च।
स्मरण पठन और जाप से, जन हों अघ से मुक्त ॥43॥

ऋषिमंडल जाप्य—ॐ ह्रां ह्रिं ह्रुं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो ह्रीं नमः।

❑

भजन

रचयित्री प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

तर्ज—माई रे माई.....

ऋषभदेव निर्वाण महोत्सव मिलकर सभी मनाएं।
आओ इस भारत वसुधा पर अगणित दीप जलाएं ॥
प्रभू की जय जय जय, प्रभु की जय जय जय जय
कोड़ा-कोड़ी वर्ष पूर्व तिथि माघ कृष्ण चौदश थी।
अष्टापद से मोक्ष पधारे ऋषभदेव जिनवर जी ॥
तब स्वर्गों से इन्द्रों ने आ.....
तब स्वर्गों से इन्द्रों ने आ दीप असंख्या जलाएं।
आओ इस भारत वसुधा पर अगणित दीप जलाएं ॥
प्रभू की जय जय जय, प्रभु की जय जय जय। ।1॥
ऋषभदेव से महावीर तक हैं चौबिस तीर्थंकर।
इन सबका उपदेश एक ही धर्म अहिंसा हितकर ॥
जिओ और जीने दो सबको.....
जिओ और जीने दो सबको यह सन्देश सुनाएं।
आओ इस भारत वसुधा पर अगणित दीप जलाएं ॥
प्रभू की जय जय जय, प्रभु की जय जय जय जय। ।2॥
गणिनी माता ज्ञानमती की मिली प्रेरणा जग को।
ऋषभदेव निर्वाणोत्सव में सब जनता जागृत हो ॥
इसीलिए "चन्दनामती".....
इसीलिए "चन्दनामती" सब उत्सव खूब मनाएं।
आओ इस भारत वसुधा पर अगणित दीप जलाएं॥
प्रभू की जय जय जय, प्रभु की जय जय जय जय ।3॥

वर्तमान चतुर्विंशति तीर्थंकरों की

तीर्थंकर	गर्भ	जन्म
श्री ऋषभ नाथ जी	आषाढ़ वदी 2	चैत्र वदी 9
श्री अजित नाथ जी	ज्येष्ठ वदी 15	माघ सुदी 10
श्री संभव नाथ जी	फाल्गुन सुदी 8	कार्तिक सुदी 15
श्री अभिनन्दन नाथ जी	वैशाख सुदी 6	माघ सुदी 12
श्री सुमति नाथ जी	श्रावण सुदी 2	चैत्र सुदी 11
श्री पद्म प्रभु जी	माघ वदी 6	कार्तिक वदी 13
श्री सुपार्श्व नाथ जी	भाद्रपद सुदी 6	ज्येष्ठ सुदी 12
श्री चन्द्रप्रभ जी	चैत्र वदी 5	पौष वदी 11
श्री पुष्पदन्त नाथ जी	फाल्गुन वदी 9	मगसिर सुदी 1
श्री शीतल नाथ जी	चैत्र वदी 8	माघ वदी 12
श्री श्रेयाँस नाथ जी	ज्येष्ठ वदी 6	फाल्गुन वदी 11
श्री वासुपूज्य जी	आषाढ़ वदी 6	फाल्गुन वदी 14
श्री विमल नाथ जी	ज्येष्ठ वदी 10	माघ सुदी 4
श्री अनन्त नाथ जी	कार्तिक वदी 1	ज्येष्ठ वदी 12
श्री धर्मनाथ जी	वैशाख सुदी 13	माघ सुदी 13
श्री शान्ति नाथ जी	भाद्रपद वदी 7	ज्येष्ठ वदी 14
श्री कुन्थु नाथ जी	सावन वदी 10	वैशाख सुदी 1
श्री अरह नाथ जी	फाल्गुन वदी 2	मगसिर सुदी 14
श्री मल्लि नाथ जी	चैत्र सुदी 1	मगसिर सुदी 11
श्री मुनिसुव्रत नाथ जी	सावन वदी 2	वैशाख वदी 12
श्री नमिनाथ जी	आश्विन वदी 2	आषाढ़ वदी 10
श्री नेमिनाथ जी	कार्तिक सुदी 6	सावन सुदी 6
श्री पार्श्व नाथ जी	वैशाख वदी 2	पौष वदी 11
श्री महावीर स्वामी जी	आषाढ़ सुदी 6	चैत्र सुदी 13

पंचकल्याणक तिथियाँ

तप	ज्ञान	निर्वाण
चैत्र वदी 9	फाल्गुन वदी 11	माघ वदी 14
माघ सुदी 9	पौष सुदी 11	चैत्र सुदी 5
मगसिर सुदी 15	कार्तिक वदी 4	चैत्र सुदी 6
माघ सुदी 12	पौष सुदी 14	वैशाख सुदी 6
वैशाख सुदी 9	चैत्र सुदी 11	चैत्र सुदी 11
कार्तिक वदी 13	चैत्र सुदी 15	फाल्गुन वदी 4
ज्येष्ठ सुदी 12	फाल्गुन वदी 6	फाल्गुन वदी 7
पौष वदी 11	फाल्गुन वदी 7	फाल्गुन सुदी 7
मगसिर सुदी 1	कार्तिक सुदी 2	भाद्रपद सुदी 8
माघ वदी 12	पौष वदी 14	आश्विन सुदी 8
फाल्गुन वदी 11	माघ वदी 15	श्रावण सुदी 15
फाल्गुन वदी 14	माघ सुदी 2	भाद्रपद सुदी 14
माघ सुदी 4	माघ सुदी 6	आषाढ़ वदी 8
ज्येष्ठ वदी 12	चैत्र वदी 15	चैत्र वदी 15
माघ सुदी 13	पौष सुदी 15	ज्येष्ठ सुदी 4
ज्येष्ठ वदी 14	पौष सुदी 10	ज्येष्ठ वदी 14
वैशाख सुदी 1	चैत्र सुदी 3	वैशाख सुदी 1
मगसिर सुदी 10	कार्तिक सुदी 12	चैत्र सुदी 15
मगसिर सुदी 11	पौष वदी 2	फाल्गुन सुदी 5
वैशाख वदी 10	वैशाख वदी 9	फाल्गुन वदी 12
आषाढ़ वदी 10	मगसिर सुदी 11	वैशाख वदी 14
सावन सुदी 6	आश्विन सुदी 1	आषाढ़ सुदी 7
पौष वदी 11	चैत्र वदी 14	सावन सुदी 7
मगसिर वदी 10	वैशाख सुदी 10	कार्तिक वदी 15